International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(3): 116-118

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(3): 116-118
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 29-03-2020
Accepted: 30-04-2020

अनुज कुमार
शोध छात्र, महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, बिहार, भारत

Corresponding Author:
अनुज कुमार
शोध छात्र, महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, बिहार, भारत

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य की समीक्षा

अनुज कुमार

प्रस्तावना

महाकवि भारवि की कलाकृति किरातार्जुनियम् विदग्ध महाकाव्य के अंतर्गत परिगणित है किरातार्जुनीयम् संस्कृत साहित्य के पांच महाकाव्यों में से एक माना जाता है कालक्रमानुसार कालिदास विरचित रघुवंशम् तथा कुमारसम्भवम् इसके पूर्ववर्ती है। माघ कृत शिशुपालवधम् तथा श्रीहर्ष कृत नैषधीयचरितम् इसके परवर्ती महाकाव्य हैं। संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध वृहत्त्रयी में अन्यतम महाकाव्य है किरातार्जुनीयम्। यह महाकाव्य 18 सर्गों में निबद्ध है इसका कथानक महाभारत के वनपर्व से लिया गया है इसके नायक अर्जुन धिरोदात्त आदि गुणों से संबलित सद्वंश क्षत्रिय हैं। प्रधान रस वीर हैं। श्रृंगार रस उसके पोषक हैं।

सर्ग विवेचन

प्रारम्भिक 3 सर्गों में आरम्भावस्था से संबंधित मुख्य सन्धि है। यहां बीज पड़ जाता है। चौथे से षष्ठ सर्ग के मध्य तक यत्नावस्था से युक्त प्रतिमुख्य सन्धि है। कथा का सूत्र दोनों सर्गो से दसवें सर्ग तक प्रायः एक जैसा है। चौथे में शरद वर्णन पांचवे में हिमालय वर्णन है, बीच-बीच में षड ऋतु वर्णन, सूर्योदय, सूर्यास्त, पर्वत, नदी, जलक्रीड़ा, रतिक्रीड़ा आदि का वर्णन है। 11वें सर्ग में कथा पुनः मन्द गति से आगे बढ़ती है। इस सर्ग के अंत तक प्राप्त्याशा से संयुक्त गर्भ सन्धि है। 17वें सर्ग तक नियताप्ति अवस्था से संबन्धित विमर्श सन्धि है।

इस महाकाव्य की कथा ऐतिहासिक है दिव्य पशुपतास्त्र की प्राप्ति फल है। प्रथम सर्ग के प्रथम श्लोक में ही वर्ण्य विषय का निर्देश प्राप्त होता है—

श्रियः कुरुणामधिपस्य पालनीं प्रजासु वृत्तिं यमयुङ्क्तः वेदितुम्।
सः वर्णिलिङ्गी विदितः समाययौ युधिष्ठिरं द्वैतवने वनेचर॥ [1]

पाण्डवों की प्रशंसा कर सज्जन प्रशंसा तथा दुर्योधन की दुर्जनता की निन्दा वर्णित है। तीन सर्गों से अधिक सर्ग अर्थात् 18 सर्ग है। प्रत्येक सर्ग में श्लोक संख्या - 30 से अधिक तथा 200 से न्यून है। जैसे प्रथम सर्ग में 46, द्वितीय सर्ग में 59, तृतीय में 60, चतुर्थ में 37, तथा पञ्चम में 52 श्लोक है। अन्य सर्गों में भी यही क्रम है। इसमें सर्ग न तो स्वल्प ही हैं और न महत् है। प्रत्येक सर्ग के अंत में नियमानुसार छन्द बदल दिया गया है। पांचवें और अंतिम सर्ग में से प्रत्येक में भिन्न-भिन्न छन्दों का प्रयोग करके महाकवि ने "नानावृत्तमयः क्वापि सर्गः कश्चन दृश्यते" की सार्थकता सिद्ध कर दी है। सर्गान्त के अगले सर्ग की कथा की सूचना भी नियमानुसार दी गई है। जैसे प्रथम सर्ग के अंत में – विदधति सोपाधिसन्धि दूषणानि के द्वारा कवि ने अगले सर्ग की सूचना दी है कि अगले स्वर्ग में सन्धि तोड़ने विषयक वार्ता होगी। अंतिम श्लोक में "रिपुतिमिरमुदस्योदीयमानं दिनादौ दिनकृतमिव लक्ष्मीस्त्वां समभ्येतु भूयः" [2] से ज्ञात होता है कि महाराज युधिष्ठिर को विपत्ति के बाद पुनः लक्ष्मी प्राप्त होगी। दूसरे सर्ग के 54वें में श्लोक में व्यास आगमन की सूचना द्वारा तृतीय सर्ग के विषय का सूत्रपात्र हो जाता है। महाकाव्य का नाम आराध्य देव शिव को जो किरात के रूप में प्रकट होते हैं उनके तथा महाकाव्य के नायक अर्जुन को लक्ष्य में रखकर रचा गया है-

किराताश्च अर्जुनश्च इति किरातार्जुनौ तौ अधिकृत्य काव्यं इति किरातार्जुनीयम्।

1. अर्थगाम्भीर्य –

महाकवि भारवि निःसन्देह एक उच्चकोटि के कवि हैं। संस्कृत साहित्य के महाकवि कालिदास के बाद के कवियों में उनका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनका एकमात्र काव्यः 'किरातार्जुनीय' संस्कृत के पाँच महाकाव्यों में एक है। महाकवि भारवि कलावादी कवि है। अन्य कलावादी कवियों में माघ ने शब्द और अर्थ की गम्भीरता पर ध्यान दिया है, तो नैषधीयचरित के रचयिता श्रीहर्ष ने पौढ़ोक्ति तथा पदलालित्य पर, किन्तु महाकवि भारवि ने अर्थ के गौरव के ऊपर विशेष ध्यान दिया है और इसमें वे बहुत सफल हुए हैं। उनकी इसी विशेषता के कारण 'भारवेरर्थगौरवम्' उक्ति प्रसिद्ध है। भारवि थोड़े से शब्दों में बहुत - सी बातें कहने में कुशल है। अर्थ के विस्तार को इतनी कुशलता से शब्दों के भीतर दबाकर रख देते हैं कि जब उन शब्दों के अर्थ पर ध्यान दिया जाता है, तो एक शब्द एक लम्बे वाक्य के भाव को व्यक्त करने लगता है। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित पद्य में एक व्यापक अर्थ का थोड़े से शब्दों में सन्निवेश कर दिया गया है

सखीनिव प्रीतियुजोऽनुजीविनः समानमानान् सुहृदश्च बन्धुमिः।
स सन्ततं दर्शयते गतस्मयः कृताधिपत्यामिव साधु बन्धुताम्। [3]

उनके इसी अर्थ गौरव को ध्यान में रखकर कृष्ण कवि ने कहा है—

प्रवेशवृत्यापि महान्तमर्थं प्रदर्शयन्ती रसमादधाना।
सा ङऋभारवेः सत्पथदीपिकेव रम्या कृति कौरिव नोपजीव्या॥

शब्दों के जाल में तथा कठिन भाषा के परिवेश में भारवि की रचना कुछ कठिन भले ही लगे, किन्तु कठिनाई दूर हो जाती है, तो उनकी कविता से ऐसा रस निकलता है, जो अपने ढंग का अनूठा ही। कविता की इसी विशेषता को मल्लिनाथ ने " नारिकेलफलसम्मितं वचो भारवे : " कहकर व्यक्त किया है।

अर्थगौरव का महत्त्व स्वयं कवि ने स्वीकार किया है और उत्तम काव्य या वाणी के विषय में उनकी मुख्यता यही है कि उसमें अस्पष्टता का बहिष्कार हो अर्थगौरव पर विशेष ध्यान दिया जाय, अर्थ में पौनरुक्तता द्वितीय सर्ग में युधिष्ठिर के मुख से भीम की वाणी की प्रशंसा करते हुए कवि कहता है

स्फुटता न पदैरपाकृता न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्।
रचिता पृथगर्थता गिरां न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित्॥ [4]

वस्तुतः कला या काव्य के विषय में महाकवि भारवि ने उपर्युक्त पद्य में अपने जिस अभिमत को प्रस्तुत किया। उसकी दृष्टि से उनकी कविता केवल अर्थगौरव में ही उतरती है।

2. संवाद-योजना –

भारवि ने " किरातार्जुनीय " में संवादों का सुन्दर विन्यास किया है। संवादों की सहायते से ही कथा आगे बढ़ती है। लम्बे वर्णनों से ऊबने पर भी इन संवादों के कारण रोचकता बनी रहती है। संवादो में प्रत्येक पद्य एक नयी युक्ति तथा विचारदृष्टि को प्रस्तुत करता है। उदाहरण के लिए प्रथम सर्ग में वनेचर को वचनों से उसकी सरलता, निश्छलता स्पष्ट होती है, तो द्रौपदी के वचन से उसके मन की व्यथा एवं अपमान का वदला लेने की तीव्र छटपटाहट को व्यक्त करते हैं। द्रौपदी की उक्तियों इतनी तीखी और व्यंग्यपूर्ण है कि वे व अनोखी स्वाभाविकता प्रदान करती हैं।

वह युधिष्ठिर को प्रतीकार करने के लिए नीति का उपदेश देती है, उनके विजय की शुभकामना भी करती हौ। उसकी बौखलाहट तथा झुंझलाहट को भी कवि ने बड़े ही सुन्दर संवाद में अभिव्यक्त किया है-

इमामहं वेद न तावकी धियं विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः। [5]

और इन सभी बातों से शान्तं युधिष्टिर विचलित होते नहीं दिखाई पड़ते, तो वह कहती है-

अथ क्षमामेव निरस्तविक्रमश्चिराय पर्येषि सुखस्य साधनम्।
विहाय लक्ष्मीपतिलक्ष्म कार्मुकं जटाधरः सञ्जुहुधीह पावकम्॥ [6]

संवादों की सुन्दर रचना के कारण ही भारवि का चरित्रचित्रण सफल हुआ हैं वे अपने पात्रों के नाम मनोभाव को बड़ी कुशलता से प्रस्तुत करते है।

3. अलंकार योजना –

महाकाव्यों के इतिहास में भारवि अलंकृत काव्यशैली के प्रवर्तक माने जाते हैं। काव्य की अलंकारों से तथा शाब्दिक चमत्कारों से विशेष रूप में सजावट " किरातार्जुनीय " से ही आरम्भ होती है। उनकी उपमाओं में कालिदास की उपमाओं की तरह सरलता नहीं है। अपनी एक उपमा के कारण इन्हें आतपत्र की उपाधि मिली है। इनकी उपमा में गुलाब के उड़ते पराग को लक्ष्मी के आतपत्र की उपमा दी गई है। यह उपमा प्रायः श्लेषानुप्राणित है।

अर्थालङ्कारों में अर्थान्तरन्यास तथा काव्यलिङ्ग अलंकारों का प्रायशः सौन्दर्य इनकी कविता में मिलता है। भारवि ने रूपक, उत्प्रेक्षा, निदर्शना तथा यमक के भी सुन्दर प्रयोग किये हैं। भारवि के अर्थान्तरन्यास के प्रति पक्षपात ने उनकी कविता मे एक उल्लेखनीय विशेषता उत्पन्न की है। और वह है उनकी हृदयस्पर्शी सुक्तियां जो इस महाकाव्य में पग पग पर मिलती है। ये सुक्तियाँ उनके काव्य को रोचक वनाने में बहुत योगदान देती हैं। निःसन्देह भारवि एक कुशल नीतिज्ञ थे, तभी तो इन्होंने व्यावहारिक ज्ञान की अद्भुत प्रौढ़ता प्रदर्शित की है। प्रथम सर्ग में ही निम्नलिखित सूक्तियाँ हैं। यथा

1. **न हि प्रियं, प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितौषिणः।** [7] हितैषी व्यक्ति, असत्य प्रिय वचन नहीं कहना चाहते हैं।
2. **हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः** [8]। हितकर और मनोहर वचनः चुर्लभ है।
3. **स किं सखा साधु न शास्ति योऽधिपं हितान यः संश्रणुते स किं प्रभुः॥** [9] (जो स्वामी को उचित शिक्षा नहीं देता है, वह कुत्सित मित्र है और जो हितैषी की उचित शिक्षा को नहीं सुनता है, वह कुत्सित स्वामी है।)
4. **वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः, समुनयन् भूतिमनार्य संगमाद्।** [10] नीच व्यक्तियों से मित्रता की अपेक्षा महात्मा। से विरोध करना अच्छा है, क्योंकि उससे ऐश्वर्य की वृद्धि होती है।
5. **गुणानुरोधेन बिना न सत्क्रिया।** [11] गुणों के बिना सत्कार नहीं होता। इत्यादि।

4. भाषा तथा शैली –

भाषा तथा शैली की दृष्टि से भारवि की कविता अपनी सर्वोत्तम अवस्था में प्रसादगुणयुक्त है। उसमें कालिदास की तरह का प्रसादगुण नहीं मिलता, किन्तु माघ की तरह विकट समासोक्त पदावली का भी अभाव है। जहाँ

इन्होंने छोटे समासों का प्रयोग किया है, वहाँ रचना में सरलता और सरसता प्रस्फुटित हुई है। जैसे प्रथम सर्ग के इस पद्य में

महौजसो मानधनाः धनार्चिता धनुर्भृत संयनि लब्धकीर्तयः।
न संहतास्तस्य न भिन्नवृत्तयः प्रियाणि वाञ्छन्त्यसुभिः समीहितुम्॥ [12]

भारवि की रीति गौड़ी नहीं है, वह वैदी रीति ही है, किन्तु इनकी वौदर्भी रीति कालिदास की वैदर्भी रीति से भिन्न है। उनके पाण्डित्य प्रदर्शन ने उनकी कविता के भावपक्ष को दुर्बल बना दिया है। व्याकरण ज्ञान का प्रदर्शन करने का लोभ संवरण वे नहीं कर सके हैं। उन्हेंनि पाणिनि के अनेक सूत्रों के लिए उदाहरण प्रस्तुत किये है। यह प्रवृत्ति आगे के कवियों ने खूब अपनायी है, जैसे माघ, श्रीहर्ष तथा भट्टि ने। इस प्रवृत्ति के कारण भाषा की क्लिष्टता का दोष भी भारवि की कविता में स्थान स्थान पर पाया जाता है। काकु वक्रोक्ति का तथा निषेधद्वय का प्रयोग भी भारवि ने स्थान स्थान पर किया है। निषेधद्वय का उदाहरण है-

स्फुटता न पदैरपाकृता न च न स्वीकृतर्थगौरवम्। [13]

5. छन्द योजना –

भारवि विविध छन्दों के प्रयोग में कुशल है। उनके वंशस्थ छन्द की प्रशंसा तो क्षेमेन्द्र ने भी की है-

वृत्तच्छत्रस्य सा कापि वंशस्थस्य विचित्रता।
प्रतिभा भारवेयेन सच्छायेनाधिकीकृता॥

भारवि ने वंशस्थ के अतिरिक्त उपजाति, द्रुतविलम्बित, प्रमिताक्षरा, स्वागता, मालिनी, पुष्पितात्रा आदि वृत्तों का भी प्रयोग किया हैं। भारवि की कविता में गीतिमय माधुर्य की अपेक्षा वर्णनात्मक एवं तर्कात्मक ओज का ही प्राधान्य है। सुश्लिष्टपदविन्यास के आचार्य कालिदास के समान प्रसादमयी हृदयावर्जक पदावली का अस्तित्व इनके महाकाव्य में तो सचमुच नहीं है, किन्तु अर्थगौरवमय पदों का विन्यास यहाँ पूरी तरह मिलता है। भारवि ने जितना लिखा है, प्रौढता, अनुभूति एवं भावुकता के साथ लिखा है। संस्कृत काव्य की एक नवीन शैली विचित्रमार्ग की सृष्टि करने के लिए भारवि प्रबन्धकाव्यों के विकास में गौरवपूर्ण स्थान रखते हैं।

पादटिप्पणी

1. किरातार्जुनीयम् 1.1
2. किरातार्जुनीयम्- 1.46
3. किरातार्जुनीयम् -1.10
4. किरातार्जुनीयम्- 2.14
5. किरातार्जुनीयम्- 1.37
6. किरातार्जुनीयम् - 1.44
7. किरातार्जुनीयम्- 1.2
8. किरातार्जुनीयम्- 1.4
9. किरातार्जुनीयम्- 1.5
10. किरातार्जुनीयम्- 1.8
11. किरातार्जुनीयम्- 1.12
12. किरातार्जुनीयम्- 1.18
13. किरातार्जुनीयम् - 2.27